श्री त्रिपुरा महोपनिषत्

(हिन्दी टीका व व्याख्या सहित)

प्राक्कथन

'त्रिपुरा महोपनिषत्' अथर्व-वेद के सौभाग्य-काण्ड से सम्बन्धित है। इस उपनिषत् का अध्ययन करने से आगम के सिद्धान्तों और तदनुसार प्रचलित साधना-क्रम को हृदयङ्गम करने में विशेष सरलता अनुभव होती है। भगवती त्रिपुर-सुन्दरी के उपासकों के लिए तो यह अनिवार्य पाठ्य श्रुति है ही, किन्तु अन्य देवतोपासकों के लिए भी यह एक अत्यन्त उपयोगी ज्ञान-वर्द्धक उपनिषत् है। यही कारण है कि इसे हिन्दी अनुवाद व भाष्य-सहित एक स्वतन्त्र पुस्तक-रूप में प्रकाशित किया जा रहा है।

यहाँ एक महत्त्व की बात उल्लेखनीय है। वह यह कि तन्त्र-शास्त्रोक्त शाक्त-साधना का वेदों से और विशेषकर अथर्व-वेद से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। यह तथ्य प्रस्तुत 'त्रिपुरा महोपनिषत्' तथा इस जैसे अन्य अनेक उपनिषदों के अध्ययन से भले प्रकार प्रतिपादित हो जाता है। इन उपनिषदों के पढ़ने से ज्ञात होता है कि तन्त्र-शास्त्र में साधना-विषयक मन्त्र, यन्त्र, चक्र आदि जो तत्व बताए गए हैं, उनका उल्लेख अथर्व-वेद और ऋग्वेद में तो प्रमुख रूप से पाया ही जाता है, यजुर्वेद भी इन तत्वों की चर्चा मिलती है।

इस सम्बन्ध में यहाँ एक भ्रम का निराकरण करना आवश्यक है। बहुत से लोग अथर्व-वेद को प्रामाणिक नहीं मानते। वे कहते हैं कि 'मूल वेद तो तीन ही हैं—ऋक्, यजु और साम। इसी से वेदों का एक नाम 'त्रयी विद्या' भी है। रहा अथर्व-वेद,

तो वह बाद की रचना है। अतः उक्त तीन वेदों के समान प्रामाणिक नहीं है।' किन्तु यह कथन ठीक नहीं है।

'त्रयी विद्या' का वास्तव में यह अर्थ नहीं है कि वेद तीन हैं। अपितु यहाँ 'त्रयी विद्या' से कर्म, उपासना और ज्ञान—इन तीन काण्डों से तात्पर्य है। इस प्रकार 'त्रयी विद्या' का अर्थ तीन वेद करना सर्वथा अशुद्ध व भ्रामक है। फिर 'वेद' शब्द ही 'चार' का बोधक है। उदाहरणार्थ ब्रह्मा को 'वेद-बाहु' कहा कहा है अर्थात् उनके चार भुजाएँ हैं। इसी प्रकार ब्राह्मणों में एक आस्पद है 'चतुर्वेदी', जिसका अर्थ है चार वेदों का जानने-वाला। अतएव वेद को मूलतः त्रि-संख्यक बताना बिलकुल निराधार है। वेद वस्तुतः और मूलतः चार ही हैं। वे हैं—१ ऋग्वेद, २ यजुर्वेद, ३ साम-वेद और ४ अथर्व-वेद।

केवल अथर्व-वेद में ही साधना के कर्म-काण्ड का निर्देश नहीं है। अन्य वेदों में भी कर्म-काण्ड की व्यवस्था यथा-स्थान मिलती है। 'अथर्वण' के नाम का उल्लेख भी अन्य तीनों वेदों में हुआ है। अध्वर्यु, होता, उद्‌गाता और ब्रह्मा—चार प्रकार के ये पुरोहित भी लोक-विश्रुत हैं। इनमें से अन्तिम अर्थात् ब्रह्मा पर अन्य ऋत्विकों के कार्य के निरीक्षण का दायित्व रहता है।

कहते हैं कि अथर्व-वेद का नाम-करण एक ऐसे ही महान् ब्रह्मा के नाम पर हुआ है, जो अङ्गिरा की कुल-परम्परा के माने जाते हैं। मुण्डकोपनिषत् में कहा है कि 'ब्रह्मा ने अपने प्रथम पुत्र अथर्व को उस ब्रह्म-विद्या का उपदेश किया, जो सभी विद्याओं का कोष है और अथर्व ने उसका उपदेश अङ्गिरा को किया।'

एक सनातन-धर्मी के दृष्टि-कोण से किसी एक वेद या उपनिषत् को अन्य वेदों या उपनिषदों से अधिक महत्व देना या अधिक प्रामाणिक मानना अनुचित है। सूत-संहिता कहती है कि 'वेद एक है और उसका लक्ष्य भी एक ही है किन्तु यह विभिन्न शाखाओं में विभक्त है।' इसी से वेद अनन्त कहे गए हैं—'अनन्ता वै वेदाः।' अतएव अथर्व-वेद उतना ही पूज्य और माननीय है, जितने कि अन्य तीन वेद क्योंकि ये चारों ही वास्तव में एक ही हैं। ऐसे ही अथर्व-वेद के सौभाग्य-काण्ड से सम्बन्धित यह 'त्रिपुरा महोपनिषत्' भी विज्ञ साधकों को अत्यन्त सम्मान्य रहा है।

प्रस्तुत 'त्रिपुरा महोपनिषत्' के महत्व को हृदयङ्गम कर उद्‌भट विद्वान् और सिद्ध कौल साधक तथा भगवती श्री के अनन्योपासक भास्कर राय ने इसकी व्याख्या करने का स्तुत्य कार्य किया। उनकी उसी व्याख्या के आधार पर इस पुस्तक की हिन्दी टीका तैयार की गई है। अतएव यहाँ पर विद्वद्-वर्य भास्कर राय का संक्षेप में परिचय देना उचित होगा।

'भास्कर राय का आविर्भाव १७वीं शती के अन्तिम चतुर्थांश में हुआ माना जाता है और १८ वीं शती के द्वितीयार्द्ध तक वे जीवित रहे, ऐसा विद्वानों का अनुमान है। उनके सम्बन्ध में यह कथा प्रचलित है कि 'भास्कर राय सब विद्याओं के ज्ञाता थे और शाक्त-धर्म के वामाचार के कट्टर अनुयायी थे। उन दिनों वे काशी में निवास करते थे। वहाँ का पण्डित-वर्ग उनसे प्रसन्न नहीं था।

'अन्ततोगत्वा काशी के प्रायः सब पण्डितों ने प्रसिद्ध ग्रन्थ-कार नारायण भट्ट के नेतृत्व में यह निश्चय किया कि भास्कर

राय को शास्त्रार्थ द्वारा यह मानने को बाध्य किया जाय कि उन्होंने पूजन की वाम-मार्गीय पद्धति को अपना कर भारी भूल की है। भास्कर राय को जैसे ही यह बात मालूम हुई, उन्होंने स्वयं उक्त पण्डितों को अपने यहाँ आयोजित एक महा-याग में इस उद्देश्य से आमन्त्रित किया कि शास्त्रार्थ द्वारा सदा के लिये यह निर्णय कर लिया जाय कि वाम-मार्ग के प्रति उनकी निष्ठा ठीक है या पण्डितों की उक्त धारणा।

'नारायण भट्ट और उनके अनुयायियों ने आमन्त्रण स्वीकार कर लिया और निर्दिष्ट समय पर वे याग-शाला में पहुँच गये, जहाँ भास्करराय ने बड़े आदर के साथ उनका स्वागत किया। महा-याग की भव्य व्यवस्था और भास्करराय की आध्यात्मिक महत्ता से सारा पण्डित-वर्ग प्रभावित हो उठा और शास्त्रार्थ की उनकी उग्र प्रवृत्ति कुंठित हो गई। फिर भी, उन्होंने मन्त्र-शास्त्र-सम्बन्धी कुछ जटिल प्रश्नों को उठाया, जिनका समाधान भास्करराय ने तुरन्त ही कर दिया।

'इसी समय एक विद्वान् संन्यासी कुंकुमानन्द सरस्वती ने पण्डितों को सम्बोधित करते हुए यह कहा कि 'भास्करराय को हत-प्रभ करने का आपका सारा प्रयास व्यर्थ जायगा क्योंकि साक्षात् श्री देवी ही उनकी वाणी के द्वारा बोल रही हैं।' किन्तु नारायण भट्ट को इस कथन पर विश्वास नहीं हुआ। उन्होने प्रत्यक्ष प्रमाण की माँग की। तुरन्त ही उस संन्यासी ने याग-स्थल-स्थित उस पात्र का कुछ जल हाथ में लिया, जिससे भास्करराय ने श्री देवी को स्नान कराया था, और उससे नारायण भट्ट की आँखों को अभिषिक्त कर दिया। क्षण ही भर में नारायण भट्ट को दिव्य दृष्टि प्राप्त हो गई और उन्होने

भास्कर राय के कंधों पर विराजमान तथा उनके मुख से बोलती हुई श्री देवी के अनूठे दर्शनों को प्राप्त किया। फलतः जो नारायण भट्ट भास्करराय को शास्त्रार्थ में परास्त करने आए थे, उन्हें उनका प्रशंसक होकर लौटना पड़ा।'

इस कथा में अतिशयोक्ति हो सकती है किन्तु इससे इतना तो विदित ही हो जाता है कि भास्करराय एक महान् कौल साधक थे और उनकी महत्ता को सम-कालीन पण्डितों ने भी स्वीकार कर लिया था।

भास्कर राय के एक शिष्य जगन्नाथ की 'भास्कर-विलास' नामक कृति से उनके जीवन के सम्बन्ध में विशेष जानकारी प्राप्त होती है। यही जगन्नाथ बाद में अपने दीक्षा-नाम उमा-नन्दनाथ नाम से प्रसिद्ध हुए। 'भास्कर-विलास' के अनुसार भास्करराय की जीवन-कथा निम्न प्रकार है--

बहुत समय हुए, गम्भीर राय नाम के एक विद्वान् ब्राह्मण थे, जिनका गोत्र विश्वामित्र था। वे सर्व-गुण-सम्पन्न तो थे ही, सम्पत्ति-शाली भी थे। विजय-नगर राज्य के तत्कालीन शासक उनकी प्रतिभा से आकृष्ट हुये और उन्हें अपने यहाँ महा-भारत' की व्याख्या करने के लिये नियुक्त किया। गम्भीर राय की अनुपम विद्वत्ता से उक्त शासक इतना प्रसन्न हुआ कि उसने उन्हें 'भारती' की उपाधि से विभूषित किया।

गम्भीर राय की पत्नी का नाम था कोणमाम्बा। इन्हीं के यहाँ भाग नामक ग्राम में भास्कर राय का जन्म हुआ। भास्कर का उपनयन-संस्कार उनके पिता ने काशी में सम्पन्न किया और उन्हें नरसिंहाध्वरिन के पास अध्ययन हेतु रखा गया। इनसे भास्कर ने अठारहों विद्याओं की शिक्षा प्राप्त की और यह

सब पढ़ने में इन्हें विशेष समय भी नहीं लगा क्योंकि एक तो ये जन्मना अत्यन्त मेधावी थे और दूसरे जब ये बहुत छोटे थे, तभी इनके पिता ने इन्हें भगवती सरस्वती की उपासना में लगा दिया था। यही कारण था कि जब भास्कर केवल सात वर्ष के एक बालक थे, तभी वे स्तुति-पाठ अत्यन्त कुशलतापूर्वक करने लगे थे।

गङ्गाधर वाजपेयिन् से गौड़-तर्क की शिक्षा पूर्णतया प्राप्त कर चुकने पर भास्कर का विवाह आनन्दी के साथ कर दिया गया। भास्कर राय का ध्यान अथर्व-वेद की ओर आकृष्ट हुआ और उन्होंने बड़े परिश्रम के साथ इसके अध्ययन-अध्यापन का कठिन कार्य प्रारम्भ किया। 'देवी-भागवत महा-पुराण' और रामायण के आठवें 'अद्भुत काण्ड' को लोक-प्रिय बनाने का श्रेय वस्तुतः भास्कर राय को ही है।

भास्कर राय ने अपनी धर्म-पत्नी को भगवती श्रीविद्या की दीक्षा दी और उनका नाम 'पद्मावती अम्बिका' रखा। स्वयं भास्कर राय ने शिवदत्त सुकुल से अपना पूर्णाभिषेक कराया। इसके बाद उन्होंने गुजरात का भ्रमण किया और वहाँ वल्लभ सम्प्रदाय के एक आचार्य को शास्त्रार्थ में परास्त किया। माध्व सम्प्रदाय के एक संन्यासी ने उन्हें दार्शनिक शास्त्रार्थ के लिये आहूत किया। इस शास्त्रार्थ में भी भास्कर राय विजयी हुए और फल-स्वरूप अपने विरोधी से सम्बन्धित पार्वती नामक एक कन्या से उन्होंने विवाह किया।

भास्कर राय कुछ समय तक काशी में भी रहे। वहाँ उन्होंने सोम-याग का एक भव्य आयोजन किया था। बाद में अपने एक शिष्य चन्द्रसेन के आग्रह पर वे कृष्णा नदी के तट-वर्ती प्रदेश में जाकर निवास करने लगे। फिर कुछ समय के बाद वे कोल देश में चले गये, जहाँ कावेरी के दक्षिणी तट-वर्ती तिरुवालन काड् नामक ग्राम में उनके न्याय-शास्त्र के शिक्षक गङ्गाधर वाजपेयिन् निवास करते थे। अपने पुराने गुरु के निकट रहने के उद्देश्य से भास्कर राय ने अपने स्थायी निवास के लिए भास्कर-राज-पुरम् नामक ग्राम को चुना। यह ग्राम उन्हें तंजौर के तत्कालीन मराठा शासक ने प्रदान किया था और यह उक्त तिरुवालन काडु ग्राम के ठीक सामने कावेरी के उत्तरी तट पर स्थित था। श्री भास्कर राय ने दीर्घायु पाई और प्रसिद्ध मध्यार्जुन क्षेत्र (आधुनिक नाम—तिरु-विद्दैमरुदूर, दक्षिण रेलवे) में उनका देहान्त हुआ।

भास्कर राय और उनकी पत्नी ने अनेक देव-मन्दिरों का निर्माण व अनेक का जीर्णोद्धार किया। काशी में चक्रेश मन्दिर उन्हीं का बनवाया है। मूल-हृद में पाण्डुरङ्ग के नाम से एक और कोंकण देश में गम्भीरनाथ के हेतु अनेक मन्दिर निर्मित कराये। रामेश्वर में वज्रेश्वर मन्दिर और सन्नति नामक स्थान में उन्होंने अपनी कुल-देवता चन्द्रलाम्बा का मन्दिर श्री-चक्र के रूप का बनवाया। कोल देश के कहलेश मन्दिर में दैनिक, मासिक और वार्षिक पूजन-समारोहों का सूत्र-पात भी उन्होंने किया। उनकी प्रथम पत्नी ने कावेरी-तटवर्ती भास्कर-पुर से भास्करेश्वर मन्दिर के चारों ओर चार-दीवारी बनवा-कर उसका पुनर्निर्माण कराया।

भास्कर राय की महत्ता और दैवी शक्ति के सम्बन्ध में अनेक किंवदन्तियाँ प्रसिद्ध हैं। एक ऐसी ही किंवदन्ती का वर्णन यहाँ किया जाता है। जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, भास्कर राय ने अपने जीवन का अन्तिम समय मध्यार्जुन-